कमलजीत बनाम कृष्ण लाल

497

( अर्चना पुरी, जे.)

अर्चना पुरी से पहले, जे.

कमलजीत-याचिकाकर्ता

बनाम

कृष्ण लाल-2022 का उत्तरदाता सी. आर. सं. 4488

04 मार्च, 2024

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-ओ. 21, आर. 32 और आर. 35-डिक्री का निष्पादन-प्रत्यर्थी ने अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर किया जिसमें अपने हिस्से के घर पर कब्जा करने की मांग की गई थी-प्रतिवादी के पक्ष में मुकदमा-निष्पादन याचिका दायर की गई-कब्जे का वारंट जारी किया गया-चुनौती दी गई, यह तर्क देते हुए कि आदेश पेटेंट अवैधता से ग्रस्त है-आयोजित, अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए डिक्री का निष्पादन जहां एक पक्ष से कब्जा मांगा जाता है, जो अपने स्वयं के कब्जे के साथ भाग लेने के लिए इच्छुक नहीं था, ओ. 21, आर. 32, सी. पी. सी., 1908 के संदर्भ में प्रभावी हो सकता है और प्रावधानों को लागू करके नहीं। O. 21, R. 35, CPC, 1908 के तहत-याचिका खारिज कर दी गई। यह माना गया कि इस पृष्ठभूमि में, इस न्यायालय द्वारा गुरचरण सिंह और एक अन्य बनाम गुरुद्वारा श्री सिंह सभा, 2004 (2) आर. सी. आर. (सिविल) 432 में दिए गए निर्णय का उपयोगी संदर्भ दिया जा सकता है, जिसमें, सरूप सिंह के मामले (उपरोक्त) में माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों के संबंध में एक अंतर किया गया था, जो वादी द्वारा अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए दायर मुकदमे से संबंधित था, जिसमें प्रतिवादी को विवाद में कार्यशाला छोड़ने और खाली करने का निर्देश दिया गया था। वादी मुक़दमे की संपत्ति का मालिक था और प्रतिवादी कार्यशाला चलाने के लिए एक लाइसेंसधारी था। विद्वत विचारण न्यायालय के समक्ष मुकदमे का फैसला सुनाया गया। प्रतिवादी द्वारा दायर पहली अपील को खारिज कर दिया गया और दूसरी अपील को भी अदालत द्वारा खारिज कर दिया गया। जब वादी ने फांसी की याचिका दायर की, तो अदालत ने डिलीवरी का आदेश दिया और डिलीवरी वारंट जारी किए। उक्त आदेश को चुनौती देते हुए, पुनरीक्षण याचिका दायर की गई थी और पुनरीक्षण याचिका का निपटारा करते समय, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब डिक्री कब्जे के वितरण के लिए नहीं है, और न ही डिक्री धारक ने कब्जा प्राप्त करने के लिए अपनी पात्रता का फैसला किया है, तो आदेश XXI नियम 35 सी. पी. सी. के प्रावधान आकर्षित नहीं होते हैं। डिक्री धारक केवल आदेश XXI नियम 32 सी. पी. सी. को सिविल जेल में निर्णय-देनदार को हिरासत में रखने या उसकी संपत्ति को कुर्क करने और बेचने या दोनों के लिए लागू कर सकता है। यह देखा गया कि जहां कोई पक्ष इस उद्देश्य के लिए ठीक से बनाए गए मुकदमे में कब्जे की डिलीवरी के बजाय खाली करने के लिए निषेधाज्ञा के लिए डिक्री लेने में संतुष्ट है, उसे इसके तार्किक परिणामों का सामना करना पड़ता है और वह डिक्री को केवल 498 के अनुसार निष्पादित कर सकता है।

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा

2024 (1)

(पैरा 11) ने आगे यह अभिनिर्धारित किया कि यह सत्य है कि उपरोक्त निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निषेधाज्ञा के लिए वाद में, डिक्री धारक को केवल आदेश XXI नियम 32 सी. पी. सी. के संदर्भ में उपचार की मांग करनी होती है और वह आदेश XXI नियम 35 सी. पी. सी. के तहत प्रावधानों को लागू नहीं कर सकता है। हालाँकि, उस मामले में, अनिवार्य निषेधाज्ञा का आदेश केवल कार्यशाला को छोड़ने और खाली करने के लिए था। ऐसा लगता है कि कब्जा सौंपने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई थी। हालाँकि, हाथ में मामले में, मुकदमा अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए दायर किया गया था। याचिकाकर्ता-प्रतिवादी को खाली करने और घर के आधे हिस्से का कब्जा सौंपने का निर्देश देते हुए अनिवार्य निषेधाज्ञा देने के लिए विशेष रूप से प्रार्थना की गई थी। अभियोग में अधिकार के लिए प्रार्थना विशेष रूप से उठाई गई थी। उस प्रार्थना पर न्यायालय द्वारा अनुकूल विचार किया गया था और सटीक रूप से, इस कारण से, सरूप सिंह (मामले) से कोई समर्थन नहीं लिया जा सकता है। (पैरा 12) ने आगे कहा कि सरूप सिंह के मामले (उपर्युक्त) में व्यक्त विचार के बारे में विधि आयोग द्वारा नोटिस लिए जाने के मद्देनजर, व्यापक दृष्टिकोण अपनाने के लिए एक सिफारिश की गई थी, जिसे उप-नियम (5) में स्पष्टीकरण अंतःस्थापित करके स्वीकार कर लिया गया था। दी गई परिस्थितियों में, न्यायालय निर्णय देनदार की कीमत पर स्वयं डिक्री धारक या न्यायालय द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, जहां तक व्यवहार्य हो सके, किए जाने के लिए आवश्यक कार्य का निर्देश देने के लिए पूरी तरह से सक्षम है। तत्काल मामले में, अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए डिक्री का निष्पादन, जहां एक लाइसेंसधारी से कब्जा मांगा जाता है, जो अपने स्वयं के कब्जे के साथ भाग लेने के लिए इच्छुक नहीं था, उपरोक्त आदेश कानून की भावना के अनुरूप है और विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिश के अनुसार स्पष्टीकरण जोड़ा गया है।

(पैरा 16) राज कुमार भाटिया, अधिवक्ता, याचिकाकर्ता की ओर से। अनुज बालियान, प्रत्यर्थी के वकील।

अर्चना पुरी, जे। (1) वर्तमान पुनरीक्षण याचिका में चुनौती 2019 के निष्पादन आवेदन No.20 में विद्वत निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 04.10.2022 के आदेश को दी गई है, जिसके तहत विद्वत विचारण न्यायालय ने कमलजीत बनाम कृष्ण लाल को जारी किया है।

499

( अर्चना पुरी, जे.)

(6) उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता-जजमेंट डेटर ने वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की। (7) शुरुआत में, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया जाता है कि चूंकि यह विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए डिक्री थी, इसलिए कब्जे के वारंट जारी नहीं किए जा सकते थे। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश एक पेटेंट अवैधता से ग्रस्त है क्योंकि आदेश XXI नियम 32 सी. पी. सी. के तहत, कब्जे का कोई वारंट नहीं है

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा

2024 (1)

(9) मान लीजिए, प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता को संपत्ति को खाली करने और उसका कब्जा सौंपने का निर्देश देने के लिए अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए एक मुकदमा दायर किया था, जैसा कि डिक्री शीट में विस्तृत है, जिसे अदालत की फाइल में रखा गया है और स्थायी निषेधाज्ञा से राहत की भी मांग की है और 10.09.2008 से विचाराधीन परिसर के उपयोग और कब्जे के लिए प्रति माह @Rs.1500 के बकाया की वसूली, जब तक कि कब्जा वादी को नहीं सौंप दिया जाता है। निर्विवाद रूप से, न्यायालय द्वारा 10.03.2015 दिनांकित निर्णय के माध्यम से मुकदमा चलाया गया था। अभिलेख पर ऐसा कुछ भी सामने नहीं आ रहा है कि उक्त निर्णय को आगे चुनौती दी गई है। यह उल्लेख करना उचित है कि उपरोक्त निर्णय से स्पष्ट है कि वाद संपत्ति शुरू में देस राज का स्वामित्व था, जिसने अपने एक बेटे, कुलदिप सिंह, जो याचिकाकर्ता का भाई है, के पक्ष में 15.04.1991 दिनांकित उपहार विलेख निष्पादित किया था। वर्तमान याचिकाकर्ता (जो ट्रायल कोर्ट के समक्ष प्रतिवादी था) के पास भी घर के बगल में दो कमरे, एक रसोई और एक बाथरूम था, जहां वह अपने परिवार के साथ रह रहा था और घर का बचा हुआ हिस्सा कुलदिप सिंह के कब्जे में था। कहा जाता है कि कुलदिप सिंह ने कृष्ण लाल के पक्ष में 30.04.2007 दिनांकित एक बिक्री विलेख निष्पादित किया था। प्रतिवादी-वादी ने याचिकाकर्ता-प्रतिवादी से संपत्ति खाली करने और घर के आधे हिस्से के खाली कब्जे को सौंपने का अनुरोध किया था, क्योंकि उक्त संपत्ति का उपयोग करने का उसका लाइसेंस पहले ही 22.08.2008 दिनांकित नोटिस की सेवा के साथ समाप्त कर दिया गया था।

1 ए. आई. आर. 1972 दिल्ली 142 कमलजीत बनाम कृष्ण लाल

501

( अर्चना पुरी, जे.)

(11) इस पृष्ठभूमि में, इस न्यायालय द्वारा गुरचरण सिंह और एक अन्य बनाम गुरुद्वारा श्री सिंह सभा 2 में दिए गए निर्णय का उपयोगी संदर्भ दिया जा सकता है, जिसमें, सरूप सिंह के मामले (उपरोक्त) में माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों के संबंध में एक अंतर किया गया था, जो वादी द्वारा अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए दायर मुकदमे से संबंधित था, जिसमें प्रतिवादी को विवाद में कार्यशाला छोड़ने और खाली करने का निर्देश दिया गया था। वादी मुक़दमे की संपत्ति का मालिक था और प्रतिवादी कार्यशाला चलाने के लिए एक लाइसेंसधारी था। विद्वत विचारण न्यायालय के समक्ष मुकदमे का फैसला सुनाया गया। प्रतिवादी द्वारा दायर पहली अपील को खारिज कर दिया गया और दूसरी अपील को भी अदालत द्वारा खारिज कर दिया गया। जब वादी ने फांसी की याचिका दायर की, तो अदालत ने डिलीवरी का आदेश दिया और डिलीवरी वारंट जारी किए। उक्त आदेश को चुनौती देते हुए, पुनरीक्षण याचिका दायर की गई थी और पुनरीक्षण याचिका का निपटारा करते समय, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब डिक्री कब्जे के वितरण के लिए नहीं है, और न ही डिक्री धारक ने कब्जा प्राप्त करने के लिए अपनी पात्रता का फैसला किया है, तो आदेश XXI नियम 35 सी. पी. सी. के प्रावधान आकर्षित नहीं होते हैं। डिक्री धारक केवल आदेश XXI नियम 32 सी. पी. सी. का उपयोग निर्णय-देनदार को सिविल जेल में रखने या उसकी संपत्ति या दोनों को कुर्क करने और बेचने के लिए कर सकता है। यह देखा गया कि जहां एक पक्ष डिक्री की मांग करने में संतुष्ट है 2 2004(2) आर. सी. आर. (सिविल) 432 502

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा

2024 (1)

सरूप सिंह के मामले (ऊपर) में दिए गए माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले पर विचार किया गया। विधि आयोग की रिपोर्ट का हवाला देते हुए और 2002 के अधिनियम 22 द्वारा आदेश XXI नियम 32 उप नियम (5) सी. पी. सी. के तहत लाए गए संशोधन पर संकीर्ण दृष्टिकोण की तुलना में व्यापक दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता है, जिसमें आदेश XXI नियम 32 उप नियम (5) सी. पी. सी. में स्पष्टीकरण शामिल किया गया है, यह देखा गया कि सरूप सिंह के मामले (ऊपर) में लिया गया दृष्टिकोण संकीर्ण दृष्टिकोण है जो पक्ष को आगे मुकदमेबाजी के लिए प्रेरित करता है और यह न्याय के कारण को आगे नहीं बढ़ाएगा। (14) इसमें विधि आयोग द्वारा की गई टिप्पणियों को ध्यान में रखा गया था, जिन्हें पुनः प्रस्तुत किया गया है, जैसा कि यहां दिया गया हैः - “सरूप सिंह के मामले (ऊपर) में दिल्ली उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले का उल्लेख करते हुए विधि आयोग ने निम्नलिखित टिप्पणी की है -

"8.1.10. दिल्ली के एक मामले में (सरूप सिंह बनाम दर्योधन सिंह, ए. आई. आर. 1972 दिल्ली 142 (एफ. बी.)) तुलना आदेश 21, नियम 32 और आदेश 21 नियम 35 के बीच थी। लाइसेंसधारक के खिलाफ जारी निषेधाज्ञा लाइसेंस के रूप में उसके द्वारा कब्जा किए गए परिसर को खाली करने के लिए थी।

यह माना गया था कि कदम कमलजीत बनाम कृष्ण लाल

503

( अर्चना पुरी, जे.)

8.1.12. सरूप सिंह के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले सहित विभिन्न उच्च न्यायालयों के उपरोक्त फैसलों पर ध्यान देने के बाद, विधि आयोग ने सिफारिशें कीं, जिसके कारण स्पष्टीकरण 5 सम्मिलित किया गया। विधि आयोग की सिफारिशें इस प्रकार हैंः - 8.1.13. अनुशंसा। -स्पष्ट रूप से इस मुद्दे पर स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। यह सुझाव दिया जाता है कि विधायी संशोधन के मामले के रूप में, व्यापक दृष्टिकोण को शामिल करना बेहतर है (हालांकि अधिकांश उच्च न्यायालयों ने एक विपरीत दृष्टिकोण लिया है) और यह प्रावधान करना कि "किए जाने के लिए आवश्यक कार्य" शब्द निषेधात्मक (साथ ही साथ अनिवार्य) आदेशों को शामिल करते हैं। यह सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 3 (2) के अनुरूप भी होगा, जिसमें प्रावधान है कि सभी केंद्रीय अधिनियमों में "अधिनियम" शब्दों में अवैध चूक शामिल है। इसके अलावा, गुण-दोष के आधार पर यह भी औचित्य है कि एक डिक्री धारक को एक डिक्री के प्रवर्तन की प्रकृति में राहत प्राप्त करने के लिए एक अलग मुकदमे के लिए क्यों प्रेरित किया जाना चाहिए, जिसे उसने समय, श्रम और धन के काफी खर्च के बाद प्राप्त किया होगा।

(15) विधि आयोग की सिफारिशों की पृष्ठभूमि में, अनुच्छेद No.10 का लाभकारी संदर्भ देना उपयुक्त है। गुरचरण सिंह का मामला (ऊपर), जो यहाँ दिया गया हैः -

10. यह पूर्व-उल्लिखित ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए है कि सिविल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 1 के आदेश की जांच की जानी चाहिए। अभिव्यक्ति 'किए जाने के लिए आवश्यक कार्य' को निषेधात्मक के साथ-साथ अनिवार्य निषेधाज्ञा तक बढ़ा दिया गया है। पूर्ण 504 द्वारा लिया गया दृश्य

आई. एल. आर. पंजाब और हरियाणा

2024 (1)

दिल्ली उच्च न्यायालय की पीठ को एक संकीर्ण दृष्टिकोण के रूप में माना गया है क्योंकि वह एक ऐसा मामला था, जिसमें लाइसेंसधारी के खिलाफ आदेश परिसर छोड़ने और खाली करने का था, लेकिन उच्च न्यायालय ने एक संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाते हुए आदेश 21 नियम 32 (5) को लागू करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। इसलिए, विधि आयोग द्वारा उठाए गए प्रश्न, जिसके कारण व्यापक दृष्टिकोण अपनाने की सिफारिश की गई, को उप-नियम (5) में स्पष्टीकरण जोड़कर स्वीकार कर लिया गया है। डिक्री-धारक को दूसरा मुकदमा दायर करने की आवश्यकता नहीं है जब वह पहले ही बहुत समय और खर्च करके अपने पक्ष में डिक्री प्राप्त कर चुका है। इसलिए, न्यायालय यह निर्देश देने के लिए पूरी तरह से सक्षम होगा कि किया जाने वाला कार्य या तो स्वयं डिक्री धारक द्वारा या निर्णय-देनदार की कीमत पर न्यायालय द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा यथासंभव किया जा सकता है। अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए डिक्री के तत्काल निष्पादन में, जहां एक लाइसेंसधारी से कब्जा मांगा जाता है, उपरोक्त आदेश कानून की भावना और कानून आयोग द्वारा की गई सिफारिश के अनुसार जोड़े गए स्पष्टीकरण के अनुरूप है। गुरुद्वारा साहिब में स्थित परिसर को खाली करने का निर्देश जहां निर्णय-ऋणी याचिकाकर्ताओं को सेवक के रूप में रहने की अनुमति दी गई थी, कब्जा सौंपने का निर्देश देने का एक और रूप और तरीका है। ट्वीडलेडी ट्वीडलेडम है। इसका अर्थ कब्जा सौंपने के अलावा और कुछ नहीं हो सकता है और इसलिए, विधि आयोग द्वारा सुझाए गए व्यापक दृष्टिकोण का पालन करना होगा क्योंकि यह न्याय के उद्देश्यों को पूरा करता है। तकनीकी आपत्तियाँ उठाकर आदेश को पराजित नहीं किया जा सकता है। यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि कानून की तकनीकीताओं को न्याय को आगे बढ़ाने के लिए माना जाना चाहिए न कि न्याय को हराने के लिए। एल. डी. के लिए अत्यधिक रक्षा के साथ। न्यायाधीशों, मेरा विचार है कि सरूप सिंह के मामले (उपरोक्त) में दिल्ली उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले का अनुपात आदेश 21 के नियम 32 के उप-नियम 5 में जोड़े गए स्पष्टीकरण से काफी कम हो गया है। हरिहर पांडे के मामले (उपरोक्त) में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा पसंद किए गए व्यापक दृष्टिकोण ने उचित रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि डिक्री धारक को एक और मुकदमा दायर करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह मुकदमेबाजी को कई गुना बढ़ा देगा जो सार्वजनिक नीति हतोत्साहित करेगी। अदालतें किसी निर्णय देनदार के अवैध मंसूबों में पक्षकार नहीं हो सकती हैं जो अपने अवैध कब्जे को जारी रखना चाहता है।

मैदान कमलजीत बनाम कृष्ण लाल

505

( अर्चना पुरी, जे.)

कार्ल लेवेलिन जैसे न्यायविद के नेतृत्व में यथार्थवादी स्कूल ऑफ थॉट्स द्वारा प्रचारित वास्तविकताओं को मुकदमेबाजी के पक्षकारों के सामने आना चाहिए और पर्याप्त न्याय किया जाना चाहिए। इसलिए, मुझे सिविल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं मिलता है। याचिका खारिज की जा सकती है। ऊपर दर्ज कारणों से, यह याचिका विफल हो जाती है और इसे खारिज कर दिया जाता है। ”

(18) इसलिए, विवादित आदेश पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की गारंटी नहीं देता है। परिणामस्वरूप, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका बिना किसी योग्यता के खारिज कर दी जाती है। रिपोर्टर-डॉ. सुमती जुंद